जापान-भारत संबंधों में प्रत्यक्ष अंतराल

The Perception Gap in Japan-India Relations

विक्टोरिया टुके
Victoria Tuke
March 25, 2013

चीन की बढ़ती ताकत के चिंताजनक स्वरूप के मद्देनज़र अनुकूल भूराजनैतिक परिस्थितियों के बावजूद भारत और जापान के आपसी संबंध अभी तक बहुत प्रगाढ़ नहीं हो पाये हैं. दोनों के बीच "प्रत्यक्ष अंतराल" बने रहने के कारण संबंध बहुत प्रगाढ़ नहीं हो पाये हैं.

पहली नज़र में ही भारत और जापान स्वाभाविक भागीदार-से लगते हैं. एशिया के छोर पर बसे दोनों ही देश लोकतांत्रिक मूल्यों के साथ-साथ आर्थिक विकास के जीते-जागते उदाहरण भी हैं. साथ ही भारत और जापान के बीच कोई भूमि संबंधी विवाद या ऐतिहासिक शत्रुता भी नहीं है. सन् 1998 में भारत द्वारा परमाणु परीक्षण करने के बाद से दोनों देशों के संबंध जितने खराब हो गये थे, अब उतनी ही तेज़ी से संबंधों में सुधार आया है, लेकिन अभी-भी कुछ ऐसे मुद्दे हैं जिनके कारण संबंध बहुत प्रगाढ़ नहीं हो पाये हैं.

शीत-युद्ध के दौरान राजनैतिक दृष्टि से भारत और जापान विरोधी गुटों से साथ थे और व्यापारिक देश होने के कारण आर्थिक व्यवस्था के आधार पर ही जापान के लिए यह आवश्यक भी था. सन् 1991 में भारत द्वारा अपनायी गयी आर्थिक उदारीकरण की नीति के कारण व्यावसायिक हितों को बहुत लाभ मिला, किंतु भारत और जापान के संबंधों में कोई सुधार नहीं आया, क्योंकि उस समय जापान का पूरा ध्यान ध्यान चीन और दक्षिण-पूर्वेशिया के बाज़ारों पर लगा हुआ था. इसके विपरीत जापानी कंपनियों की तुलना में कम जोखिम होने के कारण दक्षिण एशिया की कंपनियों ने भारत में पहले अपने पाँव जमा लिये और बहुत आक्रामक नीति अपनाने के कारण वे बहुत सफल भी रहीं. जापानी हितों को आकर्षित करने में कुछ प्रगति भी हुई और यह बात मई, 2012 में इस पूर्वनिर्धारित घोषणा से प्रकट होती है कि जापान भारत को बुलेट ट्रेन की उन्नत प्रौद्योगिकी की बिक्री करेगा, लेकिन राजनयिक क्षेत्रों में कुछ हलचल के बावजूद रणनीतिक स्तर पर संबंधों के सुधार में कुछ दिक्कतें आती रहीं.

टोक्यो और दिल्ली में लिये गये इंटरव्यू के अनुसार दशकों तक निष्क्रियता बने रहने के कारण एक प्रकार का मनोवैज्ञानिक गतिरोध उत्पन्न हो गया है. भारत की अपेक्षाकृत अधिक दूरी और सीमित आर्थिक उपलब्धियों के कारण भारत जापान की एशियामूलक अवधारणा में धीरे-धीरे ही प्रवेश कर पा रहा है. भारत में कुछ लोग यह मानते हैं कि अमरीका के साथ जापान के मैत्रीपूर्ण संबंधों के कारण और चीन पर नज़र रखने की राजनयिक रणनीति के कारण ही संबंध सहज नहीं हो पा रहे हैं. इसके अलावा भारत-अमरीकी संबंधों के विपरीत दोनों देशों के आम लोगों के बीच सीमित संबंधों के कारण और सांस्कृतिक विनिमय की कमी के कारण भी आपसी सूझबूझ नहीं बढ़ पायी है.

एक बड़ा प्रत्यक्ष अंतर तो इस बात में होगा कि भारत और जापान चीन के उदय को किस नज़रिये से देखते हैं. दोनों ही देश बीजिंग की सेना के आधुनिकीकरण और अपनी सीमाओं के आसपास की उसकी गतिविधियों को लेकर बहुत चिंतित हैं, लेकिन दोनों की प्रतिक्रियाओं में बहुत अंतर है. दोनों ही चीन से व्यापार करते रहना चाहते हैं, लेकिन भारत किसी एक के पक्ष में प्रकट रूप में सामने आने में आनाकानी कर रहा है और एक कारण यह भी है कि चीन के साथ भारत की सीमाएँ जुड़ी हुई हैं और अपनी इसी दुविधा के कारण ही भारत खुलकर सामने नहीं आ रहा है. जहाँ एक ओर जापान ने अपने आधिकारिक दस्तावेज़ में चीन की सेना को एक खतरे के रूप में दर्शाना शुरू कर दिया है जैसा कि सन् 2010 के रक्षा संबंधी दिशा-निर्देशों में दर्शाया गया है, जिसका बीजिंग ने तुरंत ही तीखी प्रतिक्रिया द्वारा प्रतिकार भी किया गया था, वहीं दूसरी ओर भारत सरकार यह सफ़ाई देने में

लगी रहती है कि जापान के साथ भारत का सुरक्षा समझौता किसी तीसरे देश की कीमत पर नहीं होगा, "विशेष रूप से चीन के लिए तो कतई नहीं होगा."

दूसरा अंतर यह है कि जापान गुट-निरपेक्षता के प्रति भारत के गहरे रुझान को भी बड़ी चुनौती के रूप में देखता है. जहाँ जापान में मित्र-देशों से साथ संबंधों को सभी दलों का व्यापक समर्थन मिलता है,वहीं भारत की शक्तिशाली लॉबी किसी भी गुटविशेष के साथ, विशेषकर कभी-कभार अमरीका के साथ भी बहुत करीबी संबंध बनाने का विरोध करती है. जैसे ही पूर्व चीनी समुद्र में प्रभुसत्ता को लेकर तनाव बढ़ा तो अमरीकी-जापानी संबंधों के पक्षधर एलडीपी ने सत्ता में फिर से वापसी की और टोक्यो और वाशिंगटन के संबंध और भी प्रगाढ़ हो गये. इससे भारत में उन लोगों को परेशानी होने लगी जो जापान को अधिक स्वायत्त भूमिका में देखना चाहते हैं.

तीसरा अंतर यह है कि भारत में यह धारणा बनी हुई है कि जापान के संवैधानिक प्रतिबंधों के कारण भारत को जापान के साथ मिलकर काम करने से कोई विशेष लाभ नहीं होगा. भारत में आपसी हितों को लेकर आवाज़ उठी है. उदाहरण के लिए संयुक्त रक्षा उत्पादन, खास तौर पर नौसैनिक बेड़ों की बात सामने आयी है, लेकिन टोक्यो में इसका विरोध हुआ है. कुछ विद्वानों के इंटरव्यू में यह बात सामने आयी है कि संविधान को समायोजित करने की असमर्थता या आनाकानी के कारण ही इस विश्वास को बल मिला है कि भारत के साथ सैन्य सहयोग करने से जापान को भारी छूट मिल सकती है.

तथापि आशावादिता के भी कुछ कारण हैं. राजनैतिक नेतृत्व के समर्थन के कारण सहयोग बढ़ने की काफ़ी उम्मीद है; प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह सन् 1991 से ही संबंधों को सुधारने के लिए लगातार प्रयत्नशील रहे हैं. यही वह समय था जब टोक्यो ने वित्तीय गिरावट को रोकने के लिए भारत को 300 मिलियन डॉलर की मदद दी थी सन् 2008 में श्री सिंह ने अपने एक भाषण में कहा था, " मैं मानता हूँ कि जापान के साथ द्विपक्षीय संबंध बनाना बहुत ज़रूरी है."

भारत द्वारा 16 दिसंबर, 2012 को प्रधान मंत्री के रूप में शिंज़ो एबे के चुने जाने का स्वागत करने की भी खास वजह है. कुछ वर्ष पूर्व सन् 2006-07 से अपने प्रधानमंत्रित्व काल में एबे ने भारत के साथ जापान के दीर्घकालीन संबंधों का समर्थन किया था और इन संबंधों को "विश्व का सबसे महत्वपूर्ण द्विपक्षीय संबंध" करार दिया था. दूसरी चुनावी विजय से पूर्व एबे ने प्रोजेक्ट सिंडिकेट शीर्षक से लिखे अपने लेख में भारत को पूर्वेशिया की एक महत्वपूर्ण शक्ति माना था और इस बात पर बेहद ज़ोर दिया था कि भारत के साथ जापान के मज़बूत संबंध होने चाहिए.

हाल ही में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार लोकप्रियता के स्तर पर जापान को सर्वाधिक विकसित, ईमानदार, मेहनती और शांतिप्रिय देश माना जाता है. लेखक ने अपने इंटरव्यू में यह स्वीकार किया है कि मारुति-सुज़ुकी और टोयटो ऑटोमोबाइल सहित जापानी उत्पादों, व्हाइट गुड्स और दिल्ली-मुंबई औद्योगिक कॉरिडोर (डीएमआईसी) जैसी विदेशी विकास सहायता (ओडीए) और दिल्ली मैट्रो प्रणाली की बेहद सराहना हुई है.

धीरे-धीरे दोनों पक्ष विशेषकर समुद्री सुरक्षा और परमाणु प्रौद्योगिकी के व्यापार के संदर्भ में प्रगाढ़ संबंधों की आवश्यकता को स्वीकार करने लगे हैं. उदाहरण के लिए, सन् 2008 में जहाँ भारत ने "एशिया नैटो" के निर्माण के समय चीन के मौखिक विरोध के कारण मालाबार समुद्री अभ्यास में जापान को शामिल करने का विरोध किया था, वहीं सन् 2012 में जापान और भारत ने पहली द्विपक्षीय पहल का प्रदर्शन किया था. इसीप्रकार जहाँ सन् 1998 में परमाणु परीक्षण के बाद जापान ने भारत का विरोध किया था, वहीं सन् 2010 में जापान ने असैन्य-परमाणु व्यापार-करार को अंतिम रूप देने के लिए वार्ता करने की घोषणा की थी. भारत द्वारा परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने से इंकार करने के बाद जापानी नीति-निर्माताओं की यह घोषणा बहुत महत्वपूर्ण थी,

क्योंकि जापान एक लंबे समय से इस संधि का सबसे घनघोर समर्थक रहा है. दिल्ली के विरोध के बावजूद दिसंबर 2011 में अमरीका-जापान-भारत के त्रिपक्षीय संवाद शुरू होने से भी यह संकेत मिलता है कि उच्च सरकारी स्तर पर विचार-विनिमय के महत्व को स्वीकार किया जाने लगा है. इस समूह के विरोध में चीन की आपत्ति के बावजूद वार्षिक बैठक जारी रखने का निर्णय किया गया है.

परंतु बड़ी चुनौतियाँ अभी-भी बनी हुई हैं. सैन्य अभ्यास छोटे पैमाने पर ही हुआ, लेकिन भारत की दिलचस्पी के बावजूद यह निश्चित नहीं है कि जापान भारत के साथ व्यापार करने के लिए हथियारों के निर्यात पर छूट देगा या नहीं. फुकुशिमा परमाणु संयंत्र की दुर्घटना के कारण जापान की मार्च, 2011 से पूर्व की रणनीति खटाई में पड़ गयी है और इस वर्ष फिर से वार्ताओं के शुरू होने की अफ़वाह के बावजूद वार्ता शुरू होने की तत्काल संभावना दिखायी नहीं देती. दोनों पक्षों द्वारा एक - दूसरे की स्थिति को कुछ हद तक समझने के वावजूद एनपीटी को लेकर जापान का आग्रह और भारत द्वारा उसे निरस्त करने के निर्णय के कारण बाधा अभी भी बनी हुई है.

साझा हितों के लिए आवश्यक होगा कि सभी पक्ष साथ-साथ ही आगे बढ़ें, लेकिन वार्ताओं की पूरी सफलता के लिए दोनों पक्षों को अपने मतभेदों को सुलझाना होगा. जापान इस बात को लेकर आश्वस्त नहीं है कि दिल्ली किस हद तक चीन के सामने अपना दृढ़ रवैया बनाये रख पाता है और सन् 2014 में सत्तासीन कांग्रेस पार्टी आम चुनाव के मद्देनज़र गुटनिरपेक्ष बने रहने की भारत की अपनी इच्छा को लेकर अपना रवैया सख्त कर पाती है. यद्यपि अब तक तो भारत की यह पहचान अच्छी तरह कारगर रही है, लेकिन अब दिल्ली पर सत्ता के संतुलन के लिए अपनी स्थिति स्पष्ट करने का दबाव बढ़ता जाएगा.

जापान धीरे-धीरे हर मौके पर भारत की स्थिति को समझने का प्रयास कर रहा है और भारत को केंद्र में रखने के लिए अपनी रणनीति में परिवर्तन करता जा रहा है. जापान और भारत की अर्थव्यवस्था में एक दूसरे के लिए पूरक स्थिति बनाये रखने के लिए संबंधों को व्यवस्थित किया जा रहा है. जापान भारत को उन्नत प्रौद्योगिकी दे रहा है, बुनियादी ढाँचे के लिए निवेश कर रहा है और ऊर्जा की आपूर्ति के लिए विशेषज्ञ दे रहा है और भारत अपनी भू-राजनैतिक हैसियत को बढ़ाते हुए अपने मध्यम वर्ग के विस्तार के ज़रिये चीन का आकर्षक विकल्प बनता जा रहा है. सन् 2012 में किये गये समझौते के अनुसार टोक्यो पर चीन के परोक्ष प्रतिबंध के कारण भारत जापान को अनूठे खनिज की सप्लाई करेगा. इससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि भारत के साथ मिलकर काम करने से जापान को व्यावहारिक लाभ मिलेगा.

दोनों देशों को "मनोवैज्ञानिक अंतराल" को चुनौती देनी होगी. सभी स्तरों पर बातचीत और गहरी होगी और संबंधों को प्रगाढ़ और गतिशील बनाने के लिए छात्रों का परस्पर विनिमय होगा, विदेशी आगंतुकों को मुलाकात के अधिकाधिक अवसर मिलेंगे,सैन्य-संवाद होंगे और नौकरशाहों के बीच सहयोग भी बढ़ेगा.

विक्टोरिया टुके (पीएचडी, वारविक) टोक्यो प्रतिष्ठान में विज़िटिंग फ़ैलो और दैवा स्कॉलर हैं. उनसे victoriatuke@hotmail.co.uk पर संपर्क किया जा सकता है.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>